



पञ्च-महाकाव्यों में वर्णित कृतज्ञ भाव (भारतीय-ज्ञान-परम्परा के परिप्रेक्ष्य में)

कपिलेश्वर साहु
शोधार्थी, लखनऊ विश्वविद्यालय

संक्षिप्तसार-

कृतज्ञता वही है, जो किसी के उपकार को हृदय से उपकार के रूप में स्वीकार करे, स्मरण करे तथा माने न कि उसका विरोध करे।

कृतम् उपकृतं जानाति स्वीकरोति यः सः कृतज्ञः। (शब्दकल्पद्रुमः, प्रथमो भागः, पृ.175)

कृतं कृतोपकारं वा जानाति सोऽपि कृतज्ञः। (शब्दस्तोम-महानिधि, पृ.131)

कृतोपकारं स्मर्तारमपि कृतज्ञः। (मनुस्मृति व्याख्यानवकम्, पृ.163)

कृतज्ञता से मानव अपने व्यवहार में आवश्यक संशोधन लाता है। उसके जीवन में नैतिकता और संस्कार की उद्भावन होती है। वह व्यक्ति विनम्र बनता है। उसकी संतुष्ट और सकारात्मक गति होती है। उसका चरित्र उदात्तता, शीलता, नैतिकता और श्रेष्ठता से परिपूर्ण होती है। सर्वोपरि कल्याणयुक्त कर्मों में उसकी प्रवृत्ति होकर वह सुख, धर्म, अर्थ और स्वर्ग का अधिकारी बनता है।

अनसूयुः कृतज्ञश्च कल्याणान्येव सेवते।

सुखानि धर्ममर्थं च स्वर्गं च लभते नरः॥ (महाभारत, आरण्यकपर्व, 200.40)

आज की समृद्ध सभ्यता, संस्कृति, परम्परा का आधार भारतीय वैदिक ज्ञान परम्परा है। अतः इसी वैदिक ज्ञान परम्परा से अनुस्यूत कृतज्ञता भाव को भी सभी जीवन में उतारना चाहिए। कृतघ्न न होकर कृतज्ञ बनना चाहिए। कृतज्ञता एक समग्र मूल्य है, जो व्यक्ति की आत्मिक परिष्कृति है।

कूटशब्द-

कृतज्ञ, परोपकार, नैतिक मूल्य, आदर्श जीवन, महाकवि कालिदास

कृतम् उपकृतं जानाति स्वीकरोति यः सः कृतज्ञः।¹ कृतं कृतोपकारं वा जानाति सोऽपि कृतज्ञः।² कृतोपकारं स्मर्तारमपि कृतज्ञः।³ कृतज्ञता वही है जो किसी के उपकार को हृदय से उपकार के रूप में स्वीकार करे, स्मरण करे तथा माने न कि उसका विरोध करे। कृतज्ञता एक पारस्परिक मानवीय भाव है, जो उपकार करने वाले और उपकार पाने वाले के बीच सम्बन्ध स्थापित करके उसे दृढ़ बनाती है और व्यक्ति को विनम्र एवं संस्कारित करती है। व्यक्ति की अपने ऊपर किए गए उपकार के प्रति हृदय से आभार की अभिव्यक्ति ही कृतज्ञता है। यह उपकार करने वाले की उपकृत व्यक्ति के प्रति सदैव प्रवाहित होती है। यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि कभी-कभी हम सीधे उपकार करने वाले की प्रत्युपकार नहीं कर पाते, लेकिन जिसने उपकार किया है, उसके प्रति आदर, स्नेह, श्रद्धा, प्रेम, सम्मान और उनका स्मरण ही उनके प्रति सबसे बड़ा प्रत्युपकार है और अनेक बार यह आभार प्रदर्शन मङ्गल-कामना अथवा आशीर्वचन का रूप भी ले लेता है।⁴ अवसर आने पर कृतोपकार व्यक्ति की सहायता करना या उसके कार्यों में सहयोग देना भी कृतज्ञता ही है। उपकार को याद रखना और उसे जीवन में प्रेरणा बनाना भी प्रत्युपकार का ही एक रूप है। कृतज्ञता का अर्थ केवल यही नहीं कि प्रत्युपकार किया जाए। बल्कि उस उपकार को जीवन में सार्थक बनाना ही है। कृतज्ञता एक समग्र मूल्य है, जो व्यक्ति की आत्मिक परिष्कृति है।

कृतज्ञता से मानव अपने व्यवहार में आवश्यक संशोधन लाता है। उसके जीवन में नैतिकता और संस्कार की उद्भावन होती है। वह व्यक्ति विनम्र बनता है। उसकी संतुष्ट और सकारात्मक गति होती है। उसका चरित्र उदात्तता, शीलता, नैतिकता और श्रेष्ठता से परिपूर्ण होती है। सर्वोपरि कल्याणयुक्त कर्मों में उसकी प्रवृत्ति होकर वह सुख, धर्म, अर्थ और स्वर्ग का अधिकारी बनता है।

अनसूयुः कृतज्ञश्च कल्याणान्येव सेवते।

सुखानि धर्ममर्थं च स्वर्गं च लभते नरः॥⁵

कृतज्ञता के प्रमुख निम्नलिखित रूप दृष्टिगत होते हैं-

- **ईश्वर के प्रति भक्त की कृतज्ञता तथा भक्त की कर्तव्यपरायणता के प्रति ईश्वर की कृतज्ञता**

जीवन, शक्ति, संरक्षण और कृपा के लिए भक्त का ईश्वर के प्रति कृतज्ञ होना तथा भक्त के मानवीय आचरण तथा कर्तव्य कर्म के प्रति कृतज्ञ होना ईश्वर की कृतज्ञता है। श्रीमद्भगवद्गीता में अर्जुन का श्रीकृष्ण के प्रति कृतज्ञ होना⁶ तथा श्रीमद् हनुमान की कर्तव्य परायणता के प्रति मर्यादापुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजी का कृतज्ञ होना इसके निदर्शन हैं।⁷

¹शब्दकल्पद्रुमः, प्रथमो भागः, पृ. 175

²शब्दस्तोम-महानिधि, पृ. 131

³मनुस्मृति व्याख्यानवक्त्रम्, पृ. 163

⁴कालिदास के सुभाषित, पृ. 220

⁵महाभारत, आरण्यकपर्व, 200. 40

⁶नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युता

स्थितोऽस्मि गतसन्देहः करिष्ये वचनं तवा॥ श्रीमद्भगवद्गीता, 18.73

⁷रामायण, सुन्दरकाण्ड, सीतान्वेषण विषयक वर्णन

- **माता-पिता के प्रति सन्तान की कृतज्ञता⁸ तथा सन्तान के कर्तव्य से सन्तुष्ट माता-पिता की कृतज्ञता**

माता-पिता के द्वारा पालन-पोषण तथा उनके संस्कार और त्याग के कारण सन्तान का उनके प्रति कृतज्ञ होना स्वाभाविक एवं नैतिक कर्तव्य है तथा उत्तम पुत्र से आत्मकल्याण परक ज्ञानार्जन करके माता-पिता भी अपने पुत्र के कर्तव्य कर्म के प्रति कृतज्ञता प्रदर्शित करते हैं। प्रायः सभी सन्तान अपने माता-पिता के प्रति कृतज्ञ रहना चाहिए। मातादेवहूति अपने पुत्र कपिल के प्रति कृतज्ञ हुई थीं।⁹

- **गुरु के प्रति शिष्य की कृतज्ञता¹⁰**

गुरु द्वारा दिए गए ज्ञान, दिशा और जीवन-मूल्यों के कारण शिष्य का गुरु के प्रति कृतज्ञ होना भारतीय परम्परा का मूल आधार है।

अज्ञान-तिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन-शलाकया।

चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥¹¹

- **प्रकृति के प्रति मनुष्य की कृतज्ञता**

भूमि¹², जल¹³, अग्नि¹⁴, वायु¹⁵, अन्न¹⁶, वृक्ष¹⁷, सूर्य¹⁸ आदि के रूप में जीवनोपयोगी संसाधन देने वाली प्रकृति के प्रति मानव को कृतज्ञ होना चाहिए एवं उनका संरक्षण तथा सन्तुलन में सतत प्रयत्न करके मनुष्य को भी अपनी कृतज्ञता को व्यक्त करना चाहिए।

- **शासक के प्रति प्रजाओं की तथा राष्ट्र के प्रति नागरिकों की कृतज्ञता**

सुशासन, सुरक्षा और कल्याणकारी कार्यों के लिए प्रजा या नागरिक शासक¹⁹ तथा राष्ट्र के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करता है।²⁰

⁸मातृदेवो भव, पितृदेवो भव। तैत्तिरीयोपनिषद्, 1.11.2

⁹श्रीमद्भागवतमहापुराण, तृतीय स्कन्ध

¹⁰शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्, श्रीमद्भागवद्गीता, 2.7

¹¹श्रीगुरुगीता, 34

¹²अथर्ववेद, 12.1/ संस्कृत साहित्य का इतिहास, पृ. 321

¹³आप इद् वा उ भेषजीरापो अमीवचातनीः, ऋ. 10.137.6

¹⁴परि मामे दुश्चरिताद् बाधस्व मा सुचरिते भज, यजुर्वेद, 4.28

¹⁵यया प्राणिनः प्राणवन्तः, अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 1

¹⁶न द्विषन्नश्रीयान्नद्विषतोऽन्नमश्रीयात्, अथर्ववेद, 9.6.24

¹⁷पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या।

नादत्ते प्रियमण्डनाऽपि भवतां स्नेहेन या पल्लवम्।

आद्ये वः कुसुमप्रसृतिसमये यस्या भवत्युत्सवः।

सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम्॥ अभिज्ञान शाकुन्तलम्, 4.9

¹⁸उद्यन् आदित्य रश्मिभिः शीर्णो रोगमनीनशः, अथर्ववेद, 9.8.22

भद्रा अश्वा हरितः सूर्यस्य, ऋ. 1.115.3

¹⁹गोपायति नरश्रेष्ठः प्रजाः सजडपण्डिताः, महाभारत, भीष्मपर्व, 13.30

²⁰तद् राजन् राजसिंहानां नान्यो धर्मः सनातनः।

- पति का पत्नी के प्रति या पत्नी की पति के प्रति कृतज्ञता

पारस्परिक सहयोग, विश्वास और त्याग के कारण दाम्पत्य सम्बन्धों में भी कृतज्ञता का भाव बना रहता है।²¹

- समाज के प्रति मनुष्य की कृतज्ञता²²

समाज से प्राप्त अवसर, संस्कार, शिक्षा, सहयोग, विश्वास और सौहार्द के कारण व्यक्ति समाज के प्रति कृतज्ञ होता है।

॥2॥

संस्कृत वाङ्मय के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि वैदिक काल से कृतज्ञ भाव की अभिव्यक्ति होती रही है। वैदिक सूक्तों के माध्यम से मन्त्रद्रष्टा ऋषि देवताओं से विश्वकल्याण की प्रार्थना करते थे। प्रकृति के प्रति उनकी कृतज्ञ भाव ही यज्ञ रूप धारण करती थी। रामायण तथा महाभारत में भी यही भाव सतत दृष्टिगोचर होते हैं। परवर्ती साहित्य में भी यही कृतज्ञ भाव सञ्चरित हुई है। प्रस्तुत आलेख में प्रमुखतः पञ्च महाकाव्यों में वर्णित कृतज्ञ भाव की अभिव्यक्ति ही ध्येय है।

पञ्च महाकाव्य से अभिप्राय महाकवि कालिदास विरचित दो महाकाव्य रघुवंश और कुमार सम्भव, महाकवि भारवि प्रणीत किरातार्जुनीय, महाकवि माघ प्रणीत शिशुपालवध, श्रीहर्ष विरचित नैषधीयचरित से है। संक्षेप में इन्हीं महाकाव्यों में अभिव्यक्त कृतज्ञ भाव का वर्णन करना ही प्रस्तुत शोध पत्र का विवेच्य है।

रघुवंश में अभिव्यक्त कृतज्ञ भाव

महर्षि वाल्मीकि जब काव्यनायक के सन्दर्भ में नारद जी से प्रश्न किये कि इस संसार में गुण, बल, चरित्र, धर्मज्ञता, कृतज्ञता, सत्यवाणी, व्रत पालन, सर्वभूतहित, ज्ञान, सामर्थ्य आदि की दृष्टि से कौन व्यक्ति संसार में श्रेष्ठ है?

को न्वस्मिन् साम्प्रतं लोके गुणवान् कश्च वीर्यवान्।

धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च सत्यवाक्यो दृढव्रतः॥²³

तीनों लोकों का ज्ञान रखने वाले नारद जी बोले वे श्रीविष्णु के स्वरूप श्रीराम हैं। यहाँ कृतज्ञता को भी एक उदात्त नायक की वैशिष्ट्य के रूप में प्रतिपादित की गयी है। विष्णुसहस्रनाम में तो भगवान् श्रीविष्णु को ही कृतज्ञ नामसे अभिहित तथा निर्दिष्ट किया गया है।²⁴ ऐसे उदात्त चरित्र का अवलम्बन करके महाकवि कालिदास रघुवंश महाकाव्य की रचना किए और नायक के रूप में इसी कृतज्ञी श्रीराम का ही चयन किए हैं।

ऋते रक्षां सुविस्पष्टां रक्षा लोकस्य धारणम्॥ शान्तिपर्व, 57.42

²¹सुमङ्गल्युप सीवेममग्निं संपत्नीं प्रति भूषेह देवान्॥ अथर्ववेद, 14.2.25

²²लोककृतः पथिकृतो यजामहे ये देवानां हुतभागा इह स्था॥ अथर्ववेद, 18.3.25

²³वाल्मीकि रामायण, बालकाण्ड, प्रथमसर्ग, 2

²⁴अनुत्तमो दुराधर्षः कृतज्ञः कृतिरात्मवान्॥ विष्णुसहस्रनामस्तोत्र, 22

महाकवि कालिदास रघुवंश में महर्षि वाल्मीकि के प्रति कृतज्ञ हो कर कहते हैं कि सूर्य से समुद्भूत तेजस्वी वंश रघुवंश के सम्बन्ध में सुन्दर काव्य रामायणादि लिख कर आदिकवि महर्षि वाल्मीकि मेरे प्रति महान् उपकार किये हैं।

अथवा कृतवाग्द्वारे वंशेऽस्मिन् पूर्वसूरिभिः।

मणौ वज्रसमुत्कीर्णे सूत्रस्येवास्ति मे गतिः॥²⁵

प्रस्तुत सन्दर्भ में स्वयं महाकवि कालिदास अपने पूर्ववर्ती कवि के प्रति अपनी कृतज्ञता को प्रकट करते हुए उनका संस्मरण किये हैं। जो उनके विश्वकवित्व को प्रदर्शित करती है। अवशिष्ट अंशों में कवि अपने काव्यिक चरित्रों के माध्यम से कृतज्ञता अभिव्यक्त किये हैं। जो उनके परोक्ष कृतज्ञता का ही परिचायक है।

जैसे सूर्य अपनी किरणों से पृथ्वी का जल आहरण करके वर्षाकाल में हजार गुना बरसा देते हैं, वैसे ही राजा दिलीप भी कृतज्ञ होकर अपनी प्रजाओं के कल्याण के लिए ही उनसे कर ग्रहण करते थे।

प्रजानामेव भूत्यर्थं स ताभ्यो बलिमग्रहीत्।

सहस्रगुणमुत्सृष्टुमादत्ते हि रसं रविः॥²⁶

कुलगुरु वशिष्ठ जी महाराजा दिलीप को पुत्र रत्न प्राप्ति के लिए नन्दिनी धेनु की सेवा करने की सत्परामर्श देते हैं।²⁷ जिससे राजा दिलीप गुरु वशिष्ठ के प्रति कृतज्ञ होकर सपत्नीक सेवा व्रत को धारण करते हैं।

तथेति प्रतिजग्राह प्रीतिमान् सपरिग्रहः।

आदेशं देशकालज्ञः शिष्यः शासितुरानतः॥²⁸

कुमारसम्भव में अभिव्यक्त कृतज्ञ भाव

पत्नी को अपने पति के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करना चाहिए तथा पति अपनी पत्नी के प्रति। यह भाव हमें महाराज हिमालय और उनकी पत्नी मैना में देखने को मिलता है। जब शिव जी के लिए पार्वती जी का विवाह प्रस्ताव ले कर सप्तर्षिगण हिमालय के द्वार समुपस्थित हुए थे, तब हिमालय इस प्रस्ताव में सहमत थे फिर भी पत्नी के प्रति कृतज्ञ होने के कारण कन्या के सम्बन्ध की बात में सद्गृहस्थ की तरह अपनी पत्नी से सहमति लिए थे।

शैलः सम्पूर्णकामोऽपि मेनामुखमुदैक्षत।

प्रायेण गृहिणीनेत्राः कन्यार्थेषु कुटुम्बिनः॥²⁹

देवी मैना भी पति की स्वीकृति को अपनी भी स्वीकृति मान कर अपनी कृतज्ञता व्यक्त की हैं, क्योंकि पतिव्रता स्त्री समुचित कार्य में पति का साथ देती हैं।

²⁵रघुवंशम्, 1.4

²⁶रघुवंशम्, 1.18

²⁷सुतां तदीयां सुरभेः कृत्वा प्रतिनिधिं शुचिः।

आराधय सपत्नीकः प्रीता कामदुधा हि सा॥ रघुवंशम्, 1.81

²⁸रघुवंशम्, 1.92

²⁹कुमारसम्भवम्, 6.85

मेने मेनापि तत्सर्वं पत्युः कार्यमभीप्सितम्।

भवन्त्यव्यभिचारिण्यो भर्तृरिष्टे पतिव्रताः॥³⁰

यही भाव अभिज्ञानशाकुन्तल में भी शकुन्तला के लिए महर्षि कण्व का उपदेश के रूप में परिलक्षित है।³¹

कुमारसम्भव महाकाव्य की पञ्चम सर्ग के प्रारम्भिक पद्य में भी कृतज्ञ भाव की अभिव्यक्ति है। महादेव कामदेव को देखते ही देखते भस्म कर दिए। जिसे देखकर पार्वती जी की आशा निराशा में परिणत हो गई। अन्ततः वह महादेव को पाने के लिए सौन्दर्य से नहीं; अपितु तपस्या से प्राप्त करने की विचार प्रकट किये। क्योंकि तपस्या महादेव के अनुकूल व अनुरूप है, सौन्दर्य नहीं। पत्नी का धर्म है, पति के अनुकूल होना न कि उनका विरोध करना। अतः महादेव के प्रति कृतज्ञ होकर देवी पार्वती संसार के कल्याण के लिए तपोव्रत धारण का संकल्प की।

इयेष सा कर्तुमवन्ध्यरूपतां समाधिमास्थाय तपोभिरात्मनः।

अवाप्यते वा कथमन्यथा द्वयं तथाविधं प्रेम पतिश्च तादृशः॥³²

जब हवन करने वाले होता लोग स्वाहा, स्वधा और वषट् कहकर हवन करते हैं, उस समय अग्निदेव प्रसन्न होकर देवताओं, पितरों और मनुष्यों को प्रसन्न करते हैं। क्योंकि उन्हीं के मुख से ही सभी को अपना अपना भाग मिलता है। अग्निदेव की इसी कर्तव्यपरायणता से सारे देवता, पितर और मनुष्य उनके प्रति सदैव कृतज्ञ रहते हैं।

प्रीतः स्वाहास्वधाहन्तकारैः प्रीणयसे स्वयम्।

देवान् पितृन् मनुष्याँस्तमेकस्तेषां मुखं यतः॥³³

तीनों लोकों को सन्त्रस्त करने वाले तारकासुर का वध रूपी महनीय कार्य के लिए कुमार कार्तिकेय के प्रति देवतागण कृतज्ञ होकर उन्हें प्रणाम करते हैं।

बलरिपुरश्च नाकस्याधिपत्यं प्रपद्य व्यजयत सुरचूडारत्नघृष्टाग्रपादः॥³⁴

किरातार्जुनीय में अभिव्यक्त कृतज्ञ भाव

किरातार्जुनीय में वनेचर अपनी विनम्रता प्रकट करते हुए राजाओं के दुर्विज्ञेय चरित्र व नीतिमार्ग को जानने का श्रेय राजा युधिष्ठिर को देते हैं। जो उनकी राजा के प्रति कृतज्ञ भाव को अभिव्यक्त करती है। वह कहते हैं कि कहाँ राजाओं की नीति कुशलता और कहाँ मैं अनभिज्ञ गुप्तचर? फिर भी मैंने शत्रुनीति (दुर्योधन की नीति कुशलता और कपटपूर्ण व्यवहार) को केवल आपके (युधिष्ठिर) के प्रभाव से ही जानने में सक्षम हो पाया हूँ।

निसर्गदुर्बोधमबोधविक्लवा क्व भूपतीनां चरितं क्व जन्तवः।

³⁰कुमारसम्भवम्, 6.86

³¹भर्तुः विप्रकृतापि रोषणतया मा स्म प्रतीपं गमः। अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 4.18

³²कुमारसम्भवम्, 5.2

³³कुमारसम्भवम्, 10.17

³⁴कुमारसम्भवम्, 17.55

तवानुभावोऽयमवेदि यन्मया निगूढतत्त्वं नयवर्त्म विद्विषाम्॥³⁵

महाकवि भारवि भेदनीति निपुण शासक की एक विशेषता बताते हुए कहते हैं कि जो शासक सेवकों द्वारा कार्यपूर्ति होते ही मधुर वाणी से सम्मान व पुरस्कार देता है, वही कृतज्ञ शासक सेवकों के हृदय में सदैव निवास करता है। क्योंकि वह जानता है कि सेवक सम्मानादि से सन्तुष्ट होकर स्वामी के हित साधन में तत्पर रहते हैं और वही प्रदत्त सम्पत्ति उसकी कृतज्ञता ज्ञापित करती है।

विधाय रक्षान् परितः परेतरेणशङ्किताकारमुपैति शङ्कितः।

क्रियापवर्गेष्वनुजीविसात्कृताः कृतज्ञतामस्य वदन्ति सम्पदः॥³⁶

शिशुपालवध में अभिव्यक्त कृतज्ञ भाव

महाकवि माघ शिशुपालवध में भगवान् श्रीकृष्ण³⁷के चरित्र को अपने काव्य की पाथेय बनाए। यह उनकी भगवान् के प्रति कृतज्ञ भाव ही है, जो उनकी महाकवित्व को भी सूचित करती है।³⁸प्रकारान्तर से मल्लिनाथ भी इसे स्वीकार किये हैं।³⁹भगवान् श्रीकृष्ण का अवतार के रूप में भी कवि स्वकीय काव्य में अनेकत्र वर्णन किये हैं।⁴⁰ जो उनके कृतज्ञ भाव को ही अभिव्यक्त करता है।

स्वयं भगवान् होकर आगन्तुक अतिथि मुनि नारद जी का सत्कार करते हुए भगवान् कहते हैं कि आपका दर्शन तीनों कालों में शरीरधारियों की पवित्रता व योग्यता को प्रकट करता है। वर्तमान समय में पाप को विनष्ट करता है, भविष्य में आने वाले कल्याण का हेतु बनता है एवं भूतकाल में किये हुए पुण्यों के द्वारा ही आपका दर्शन प्राप्त होता है। जो उनकी करुणा की परिचायक होते हुए भक्त की कर्तव्य के प्रति उनकी कृतज्ञता को अभिव्यक्त करता है।

हरत्यघं सम्प्रति हेतुरेष्यतः शुभस्य पूर्वाचरितैः कृतं शुभैः।

शरीरभाजां भवदीयदर्शनं व्यनक्ति कालत्रितयेऽपि योग्यताम्॥⁴¹

नारद जी भी भगवान् की कृपा से कृतज्ञ होकर उनकी अपूर्व महिमा गान करते हुए कहते हैं कि प्रभु! सबसे महनीय दिव्य शरीर वाले आपकी सम्पूर्ण महिमा को कौन जान सकता है? योगियों-मुनियों में भी इस विषय में मतिभ्रम देखी जाती है। अर्थात् सम्पूर्ण रूप में आपको कोई नहीं जान सकता। आप अगम्य हैं।

अनन्यगुर्वास्तव केन केवलः पुराणमूर्तेर्महिमावगम्यते॥⁴²

³⁵किरातार्जुनीयम्, 1.6

³⁶किरातार्जुनीयम्, 1.14

³⁷कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्, श्रीमद्भागवतमहापुराण, 1.3.28

³⁸काव्येषु माघः कविकालिदासः, संस्कृत साहित्य का इतिहास, पृ. 264

³⁹नेतास्मिन् यदुनन्दनः स भगवान् वीरप्रधानो रसः, संस्कृत साहित्य का इतिहास, पृ. 265

⁴⁰शिशुपालवधम्, 14.59-86

⁴¹शिशुपालवधम्, 1.26

⁴²शिशुपालवधम्, 1.35

उपेयुषो मोक्षपथं मनस्विनस्वमग्रभूमिर्निरपायसंश्रया॥⁴³

नैषधीयचरित में अभिव्यक्त कृतज्ञ भाव

महाकवि श्रीहर्ष साधु सन्त पुरुष की संज्ञा देते हुए कहते हैं कि “हम आपके अधीन हैं” ऐसा कहने वाले कृतज्ञों को वे अपने प्राणरूप मूल्य से भी मूल्यवान् समझते हैं।

प्राणैः पणैः स्वं निपुणं भणन्तः क्रीणन्ति तानेव तु हन्त! सन्त॥⁴⁴

राजा नल की विशेषता की व्याख्या प्रसङ्ग में कवि कहते हैं कि राजा नल चतुर्दश विद्या में पारङ्गत थे तथा उन विद्याओं की अध्ययन, अर्थबोध, आचरण और प्रचार में सदा संलग्न रहते थे।⁴⁵ पुनश्च यही विद्या उनकी वाणी में भी झलकती थी।⁴⁶ अर्थात् वे सकल शास्त्र के ज्ञान से विमण्डित तथा व्यवहार कुशल राजा थे जो उनकी प्रजावत्सलता और जीवेदया भाव को भी अभिव्यक्त करती है। प्रथम सर्ग में हंस को दयावश छोड़ देना उनकी मनुष्येतर प्राणियों के प्रति भी आदर भाव को अभिव्यक्त करती है।

गच्छ यथेच्छमथेत्यभिधाय॥⁴⁷

हंस भी कृतोपकार की संस्मरण में अपनी कृतज्ञता राजा के प्रति अभिव्यक्त करता है।⁴⁸ वह कहता है कि राजा नल शरीर से ही नहीं अन्तःकरण से भी शुद्ध हैं।⁴⁹ वह पुनः कृतज्ञता प्रकट करके कहता है कि जैसे सूर्य वृक्षों पर धूप की ऊष्मा से उन्हें पीड़ित करने के पश्चात् अमृत जल बरसा कर उनकी पीड़ा का निराकरण करता है। वैसे ही मैंने आपको बहुत अप्रिय कहा, उसका निराकरण आपके इष्ट कार्य की पूर्ति में सहयोग करके करना चाहता हूँ।

यदवादिषमप्रियं तव प्रियमाधाय नुनुत्सुरस्मि तत्।

कृतमातपसञ्ज्वरतरोरभिवृष्याऽमृतमंशुमानिवा॥⁵⁰

जिस प्रकार दिन का महत्व रात से पता चलता है। ऋतुएँ ऋतुओं के साथ क्रम से आते हैं। जिस प्रकार प्राचीन को नवीन नहीं छोड़ता है। उसी तरह व्यक्ति भले जितनी भी प्रगतिकर ले परन्तु अपनी नींव को भूलना नहीं चाहिए। क्योंकि मूल के बिना वृक्ष की सत्ता ही नहीं होती है। अतः आज की समृद्ध सभ्यता, संस्कृति, परम्परा का आधार भारतीय वैदिक ज्ञान परम्परा है।

यथाहान्यनुपूर्वं भवन्ति यथर्तव ऋतुभिर्यान्ति साकम् ।

⁴³शिशुपालवधम्, 1.32

⁴⁴नैषधीयचरितम्, 3.88

⁴⁵अधीतिबोधाचरणप्रचारणैर्दशाश्रतसः प्रणयन्नुपाधिभिः, नैषधीयचरितम्, 1.4

⁴⁶अमुष्य विद्या रसनाग्रनर्तकी त्रयीव नीताङ्ग गुणेन विस्तरम्, नैषधीयचरितम्, 1.5

⁴⁷नैषधीयचरितम्, 1.143

⁴⁸नैषधीयचरितम्, 2.9-15

⁴⁹स्मरसुन्दर! मां यदत्यजस्तव धर्मः स दयोदयोऽज्ज्वलः॥ नैषधीयचरितम्, 2.9

⁵⁰नैषधीयचरितम्, 2.11

यथा न पूर्वमपरो जहात्येवा धातुरायूषि कल्पयैषाम् ॥⁵¹

इसी वैदिक ज्ञान परम्परा से अनुस्यूत कृतज्ञता भाव को भी सभी जीवन में उतारना चाहिए। कृतघ्न न होकर कृतज्ञ बनना चाहिए। भारतीय संविधान में वर्णित मौलिक कर्तव्यों का पालन करके राष्ट्र के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करनी चाहिए तथा भारतीय मूल्यों को समझ कर भारतीय ज्ञान परम्परा का आचरण व संवर्धन करना चाहिए। इति शम्।

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची

1. अभिज्ञान शाकुन्तलम्, डॉ. राजदेव मिश्र, डॉ. शुचिता राय, घनश्यामदास एण्ड सन्स, चौक, फैजाबाद, 2000
2. कालिदास के सुभाषित, भगवतशरण उपाध्याय, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, 1959
3. कालिदास ग्रन्थावली, भाग-1, सं. डॉ. मिथिलेश पाण्डेय, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2007
4. किरातार्जुनीयम्, प्रथमः सर्गः, डॉ. कृष्णकुमार, साहित्य भण्डार, मेरठ, 2001
5. नैषधीयचरितम्, आचार्य शेषराजशर्मा रेग्मी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2008
6. मनुस्मृति व्याख्यानवकेन समलङ्कृता, सम्पा. जयन्तकृष्ण हरिकृष्ण दवे, भारत-विद्या-भवनम्, मुम्बई, 1984
7. महाकवि माघ, डॉ. मनमोहन लाल जगन्नाथ शर्मा, नवयुग प्रकाशन, दिल्ली, 1963
8. महाभारत, आरण्यक पर्व, दूसरा भाग, सम्पा. डॉ. पं. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर, स्वाध्याय मण्डल, पारडी, बलसाड, 1968
9. महाभारत, भीष्मपर्व, सं. डॉ. पं. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर, स्वाध्याय मण्डल, पारडी, बलसाड, 1972
10. महाभारत, शान्तिपर्व, सं. डॉ. पं. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर, स्वाध्याय मण्डल, पारडी, बलसाड, 1979
11. विष्णुसहस्रनामस्तोत्र, गीताप्रेस, गोरखपुर
12. वेदसूक्तिमाला, संक. धर्मेन्द्रकुमारसिंहदेवः, सूर्यनारायणभट्टः
13. शब्दकल्पद्रुमः, प्रथमो भागः, स्यार-राजा-राधाकान्तदेव-बाहादूर, चौखम्बा संस्कृत सीरीज, आफिस, वाराणसी-1, तृतीय संस्करण, वि. 2024, 1967
14. शब्दस्तोममहानिधिः, संक. तर्कवाचस्पति श्रीतारानाथभट्टाचार्य, चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी-1, 1967
15. शिशुपालवधम्, प्रथमो सर्गः, श्री रामजीलाल शर्मा, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 1991
16. श्रीगुरुगीता, स्वामी शिवोम् तीर्थ, देवात्म शक्ति सोसायटी, ठाणे, महाराष्ट्र, 2007
17. श्रीमद्भगवद्गीता, स्वामी रामसुखदास, गीताप्रेस, गोरखपुर
18. श्रीमद्भगवतमहापुराण, प्रथम-खण्ड, गीताप्रेस, गोरखपुर
19. श्रीमद्भगवतमहापुराणम्, तृतीयस्कन्धः, टीका. श्रीमती दयाकान्ति देवी, दयालोक प्रकाशन संस्थान, इलाहाबाद, विक्रम. सं. 2044
20. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण, प्रथमखण्ड, गीताप्रेस, गोरखपुर, सं. 2071
21. संस्कृत साहित्य का इतिहास, डॉ. उमाशङ्कर शर्मा 'ऋषि', चौखम्बा भारती अकादमी, वाराणसी, 2017

⁵¹ ऋग्वेद, 10.18.5, अथर्ववेद, 12.2.25. तैत्तिरीय आरण्यक 6.10.1